आर्यों के नित्य-कर्म

मूल्य तीन आना

* ओ३म् *

आर्य्यों के नित्यकर्म्म

ऋषि दयानन्द लिखते हैं "आर्य्य नाम विद्वान्, धार्म्मिक और आप्त पुरुषों का है" और इस लिये उन के नित्य कर्म भी ऐसे ही होने चाहिएँ जो विद्वान् धार्मिक तथा आप्त पुरुषों के योग्या हों। प्रातःकाल के कामों का आरम्भ जागने के साथ ही होता है, इस लिए सब से पहिले जागने का समय निश्चय करने की आवश्यकता है। मनु भगवान का उपदेश है:—

ब्राह्मे मुहूर्त्ते बुध्येत धर्मार्थौचानुचिन्तयेत् ।
काय क्लेशांश्च तन्मूलान् वेदतत्वार्थमेवच ॥

"ब्राह्म मुहूर्त अर्थात् चार घड़ी रात रहते

ही उठे, धर्म और अर्थ का चिन्तन करें, शारीरिक रोगों का निदान और (वेदतत्वार्थ) परमात्मा का भी ध्यान करे।"

चार घड़ी के तड़के उठने का विचार

नियत किया गया है। सारे संसार के विद्वानों का अनुभव यह है कि बहुत सवेरे उठने से बुद्धि स्वच्छता से काम करना आरम्भ करती है। यह तो परीक्षा सिद्ध बात है कि सब ऋतुओं में सूर्योदय से प्रथम ही उठना मनुष्य को आलसी बनने से रोकता है। गृहस्थ को ज्येष्ठश्रमी मनु महाराज ने लिखा है। यह आश्रम सत्य शास्त्रों में सार संसार का बोझ उठाने वाला बतलाया गया है, किन्तु इस समय शोक के साथ देखा जाता है कि यह आश्रम उलटा संसार के बोझ को बढ़ा रहा है। इस

का कारण केवल यही है कि गृहस्थों ने उन नियमों को सर्वथा त्याग दिया जो वेद ने उन के लिये नियत किए थे। उन नियमों में सब से पहिले प्रातःकाल का जागना है, और प्रातःकाल जागने के लिए आवश्यक है कि सोने का समय भी नियत हो।

विद्वानों की सम्मति है कि स्वस्थ (तन्दुरुस्त जवान) आदमी के लिए ६ से ७ घंटों तक सोना आवश्यक है। गर्मियों में प्रातःकाल ४ बजे उठना आवश्यक है, जाड़ों में ५ बजे उठने से भी वही कार्य्य सिद्ध हो सकता है क्यों कि रातें बड़ी होती हैं। लड़कों तथा लड़कियों के लिये ८ घंटों तक सोना आवश्यक है। तब प्रत्येक आर्य गृह का नियम यह होना चाहिये कि गृहपति ५ वर्ष से ऊपर १२ वर्ष तक की

अवस्था वाले बच्चों को नौ बजे अवश्य सुला देवे और उन को ५ बजे से पहिले न जगावे और स्वयम् अपने पति तथा अन्य बड़े स्त्री पुरुषों सहित गार्मियों में ६ व ६॥ बजे अवश्य सो जावे। जाड़ों में १० वा १०॥ बजे सो कर ५ बजे उठना ठीक है। जो ६ घंटे की नींद में गुज़ारा कर सकें वह उठने का समय कुछ पहिले नियत करलें किन्तु सोने का समय पीछे न लेजावें क्योंकि आधी रात से पहिले के दो घंटों का आराम पिछली रात के चार घंटों के बराबर है। इस पर बहुत से भाई बहाना कर सकते हैं कि उन को जल्द नींद नहीं आती वा प्रातः उठने में आलस्य रहता है, किन्तु यह सब अभ्यास से दूर हो जाता है। सब इन्द्रियों पर मन राजा है, यह सर्व तन्त्र सिद्धान्त है।

मानसिक शक्ति का प्रयोग करो। मन में दृढ़ संकल्प कर के सो जाओ कि अमुक (फलाने) समय में उठेंगे, आश्चर्य से देखोगे कि उसी समय नींद खुल जायेगी। यह बात प्रत्येक आर्य्य को याद रखनी चाहिये कि सारी बुराइयों का समय १० बजे से लेकर ३ बजे तक है। चोर और बटमार, कामी और जुए-बाज़ इसी समय निःशङ्क घूमते और सरल शुद्धात्माओं को भी गिराने का साहस करते हैं इस लिये यह समय संयमी पुरुष ध्यान में व्यतीत करता है, और गृहस्थ को अपनी इन्द्रियों के आराम देने में व्यतीत करना चाहिये।

कार्य क्रम का समय विभाग

आर्य्य पुरुषों को केवल सोने और जागने का ही विशेष नियम नहीं बनाना चाहिये

प्रत्युत दिन रात के सारे कामों के लिए एक ही प्रकार का नियम बनाना चाहिये। स्नान, संध्या भोजनादि सब के लिये आर्य्यों का एक सा ही नियम होना चाहिये। इस के न होने से इस समय बड़ा ही विघ्न पड़ रह है।

यदि आर्य्य समाजस्थ मात्र अपने सर्व कामों के लिए एकसा ही समय नियत कर लें तो काम करने में बड़ा सुबीता होगा। फिर न अतिथि सत्कार में कष्ट होगा और न अतिथियों को ही दुःख मिलेगा।

अंग्रेज़ों ने दो बजे अपना टिफ़िन (जल-पान) का समय नियत कर रक्खा है। जिस समय दो पर चोट लगी जज फ़ैसला लिखना बन्द कर देगा, बैरिस्टर अपनी वक्तृता को बीच में ही छोड़ देगा, सौदागर सौदा देने को अटका लेगा और टिफ़िन पर बैठेगा यहां

तक कि चलती हुई रेल में भी यह लोग अपनी Lunch basket (भोजन की टोकरी) खोल कर बैठ जायँगे। किन्तु यहां कोई नियम ही नहीं। कोई दिन में दो बार खाता है, कोई तीन, कोई चार, कोई पांच बार दांतों को कष्ट देता है और कोई दिन भर ही खाता रहता है। और इस में भी कोई नियम नहीं। आज मैंने दो बार भोजन किया तो कल चार बार और परसों तीन बार करूँगा, और आये गये के पास बीमारियों की शिकायत बराबर करता चला जाऊँगा। प्रत्येक बुद्धिमान अपने तथा अपने पड़ोसियों के जीवन से बहुत से दृष्टान्त एकत्र कर सकता है।

सोने जागने का प्रकार।

सोने और जागने के सम्बन्ध में एक बात याद रखनी चाहिये। खटिया पर लेटने के

पश्चात् यदि तत्काल ही नींद न आवे तो याद करो कि तुमने सोने से प्रथम हाथ पैर धो लिए या नहीं, यदि न धोये हों तो हाथ पैर और मुंह धो कर अंगोछ डालो। यदि उस पर भी नींद न आवे तो ५ मिनट टहल कर लेट जाओ, फिर नींद आ जायगी। यदि शरीर की अवस्था ऐसी हो गई हो कि इस पर भी नींद न आवे तो सीधे लेट कर लम्बे श्वास प्रश्वास आने जाने दो और चारों ओर से हटा कर ध्यान "ओ३म्" पर लगा दो उसी समय नींद आ जायगी। नींद ठीक नहीं आ सकती यदि सोने से पहिले सायंकाल की व्यालू (भोजन) को पचने के लिये कम से कम २॥ घंटे न दिये जाएँ। इस लिये सर्व आर्य सामाजिक गृहों में सायंकाल के भोजन का समय ७ बजे से आठ बजे तक होना

चाहिये इस नियम के पालने से गृह सम्बन्धी सर्व नर-नारी रोग रहित रहेंगे। सोने के इस नियम के साथ ही जागने का नियम यह होना चाहिये कि प्रातः काल जब नींद खुले उसी समय उठ कर बैठ जाओ। प्रातः जागते हुए खटिया पर लेटे रहने से बुरे प्रकार के स्वप्न आते हैं तथा मन में बड़ा विक्षेप होता है। शरीर का मन के साथ बड़ा घनिष्ट (गहरा) सम्बन्ध है, यदि शरीर सावधान न हो तो मन भी गिरा रहता है। अतएव नींद खुलते ही (चाहे समय से आध घंटा पहिले क्यों न खुले) चारपाई पर उठ बैठो और मनु महाराज के लेखानुसारः—

पहिले धर्म का चिन्तन करो।

धर्म, अर्थ काम तथा मोक्ष मनुष्य जन्म के साधनों के चार फल बतलाये गये हैं। मनु

जी महाराज ने ऊपर लिखे श्लोक में काम का वर्णन नहीं किया, कारण यह कि काम तो मनुष्य में स्वभाव सिद्ध ही है। जो लोग कामनाओं की उत्पत्ति को ही बन्द करना चाहते हैं वह मनुष्य की बनावट से ही अनभिज्ञ हैं। मनु जी लिखते हैं:—

अकामस्य क्रिया काचिद् दृश्यते नेह कर्हिचित् ।
यद्यद्धि कुरुते किञ्चित् तत्तत्कामस्यचेष्टितम् ।२।४।

"बिना कामना के कोई भी क्रिया दिखाई नहीं देती, जो जो कुछ भी (मनुष्य) करता है वह चेष्टा कामना के बिना नहीं है।" जब मनुष्य कामनाओं का ही पुञ्ज है तो कामना करने के उपदेश की कुछ आवश्यकता नहीं। आवश्यकता यह है कि उस कामना को वश में कर के सीधे मार्ग पर चलाया जावे।

मनु जी इस लिये कहते हैं:—

कामात्मता न प्रशस्ता नचैवहास्त्यकामता ।
काम्योहि वेदाधिगमः कर्मयोगश्च वैदिकः ।२।२८॥

अत्यन्त कामातुरता से बचना और अत्यन्त निष्कामता की मौत से अपनी रक्षा करना मनुष्य का धर्म है, क्योंकि बिना कामना किये न तो वेद का ज्ञान होगा न तदनुकूल आचरण ही हो सकेंगे। इस लिए कामना करने का उपदेश देने की आवश्यकता न थी। हां आवश्यकता थी तो यह जतलाने की कि केवल कामना के ही दास न बन जाओ। बस, मनु महाराज ने शिक्षा दी कि प्रातः उठते ही स्वाभाविक कामात्मता को रोक कर पहिले धर्म अर्थात् अपने कर्त्तव्य का विचार करो, उस धर्म्म के अनुकूल जो अर्थ हों अर्थात् उन सांसारिक वस्तुओं की उपलब्धि पर विचार करो जो धर्म्म विरुद्ध न हों तथा

जिन की प्राप्ति के साधन भी धर्मानुकूल हों। इस के साथ ही शरीर सम्बन्धी रोग यदि हों तो उन के कारण को जान कर उन के बुरे परिणाम से बचने का ढंग सोचो। इस धर्म, अर्थ, तथा शारीरिक क्लेशों के निदान पर प्रातः विचार के साधन पांच वेद-मन्त्र ऋषि दयानन्द ने संस्कार विधि के गृहाश्रम प्रकरण में दिये हैं उनका मन से पाठ तथा उनके अर्थों पर विचार करने के लिये १५ मिनट बहुत हैं।

यह मन्त्र निम्न हैं—

प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे, प्रातर्मित्रावरुणा प्रातरश्विना। प्रातर्भगं पूषणं ब्राह्मणस्पतिं, प्रातस्सोममुत रुद्रं हुवेम॥ १॥

हे स्त्री पुरुषो! जैसे हम विद्वान् उपदेशक लोग प्रभात बेला में स्वप्रकाशस्वरूप परमैश्वर्य के दाता और परमैश्वर्ययुक्त प्राण उदान के

समान प्रिय और सर्वशक्तिमान् सूर्य चन्द्र को जिसने उत्पन्न किया है उस परमात्मा की स्तुति करते हैं और भजनीय सेवनीय ऐश्वर्ययुक्त पुष्टिकर्त्ता अपने उपासक, वेद और ब्रह्माण्ड के पालन करनेहारे अन्तर्यामी प्रेरक और पापियों को रुलानेहारे और सर्वरोगनाशक जगदीश्वर की स्तुति प्रार्थना करते हैं वैसे प्रातः समय तुम लोग भी किया करो ॥ १ ॥

प्रातर्जितं भगमुग्रं हुवेम, वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता । आध्रश्चिद्यं मन्यमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्यं भगं भक्षीत्याह ॥२ ॥

पांच घड़ी रात्रि रहे जयशील ऐश्वर्य के दाता तेजस्वी अन्तरिक्ष के सूर्य की उत्पत्ति करने और जो कि सूर्यादि लोकों का विशेष करके धारण करने हारा सब ओर से धारण कर्त्ता जिस किसी का भी जानने

जानने हारा दुष्टों का भी दण्ड दाता और सब का प्रकाशक है। जिस भजनीय-स्वरूप को भी इस प्रकार सेवन करता हूँ और इसी प्रकार भगवान् परमेश्वर सब को उपदेश करता है कि तुम, जो मैं सूर्य आदि जगत का बनाने और धारण करने हारा हूँ उस मेरी उपासना किया और मेरी आज्ञा में चला करो जिस से तुम लोग सब उन्नतिशील रहो इस से हम लोग उस की स्तुति करते हैं ॥२॥

भग प्रणेतर्भग सत्यराधो, भगेमां धियमुदवा ददन्नः। भग प्र णो जनय गोभिरश्वैर्भग प्र नृभिर्नृवन्तः स्याम ॥ ३ ॥

हे भजनीयस्वरूप सब के उत्पादक सत्याचार में प्रेरक ऐश्वर्यप्रद सत्य धन को देने हारे सत्याचरण करने हारों को ऐश्वर्यदाता आप परमेश्वर हमें इस प्रज्ञा को दीजिए

और उस के दान से हमारी रक्षा कीजिए। आप गाय आदि और घोड़े आदि उत्तम पशुओं के योग से राज्य श्री का हमारे लिए प्रगट कीजिए। हे! आप की कृपा से लोग उत्तम मनुष्यों से बहुत वीर मनुष्य वाले अच्छे प्रकार होवें ॥ ३ ॥

उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत, प्रपित्व उत मध्ये अह्नाम्। उतोदिता मघवन्त्सूर्यस्य, वयं देवानां सुमतौ स्याम ॥ ४ ॥

हे भगवन्! आपकी कृपा और अपने पुरुषार्थ से हम लोग इस समय अकर्षता, उत्तमता की प्राप्ति में और इन दिनों के मध्य में ऐश्वर्य युक्त औरं शक्तिवान होवें और हे परमपूजित असंख्य धन देने हारे सूर्यलोक के उदय में पूर्ण विद्वान् धार्मिक आप लोगों की अच्छी उत्तम प्रज्ञा और सुमति में हम लोग प्रवृत्त रहें ॥ ४ ॥

भग एव भगवाँ अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्तः स्याम। तं त्वा भग सर्व इज्जोहवीति, स नो भग पुरएता भवेह ॥ ५ ॥

हे सकलैश्वर्य सम्पन्न जगदीश्वर! जिससे उस आत्मा की सब सज्जन निश्चय करके प्रशंसा करते हैं सो आप हे ऐश्वर्यप्रद! इस संसार और हमारे गृहाश्रम में अग्रगामी और आगे आगे सत्य कर्मों में बढ़ाने हारे हूजिए और जिससे सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त और समस्त ऐश्वर्य के दाता होने से आप ही हमारे पूजनीय देव हूजिए उसी हेतु से हम विद्वान लोग सकलैश्वर्य सम्पन्न होके सब संसार के उपकार में तन, मन, धन से प्रवृत्त होवें ॥ ५ ॥

प्रातःकाल का कार्यक्रम।

इस के पश्चात गृह के सर्व स्त्री पुरुषों को शौच निवृत्ति के लिये १५ मिनट बहुत हैं।

इस के पश्चात छोटे बच्चों को छोड़कर अपनी धर्मपत्नी तथा अन्य गृहस्थ स्त्री-पुरुषों को साथ ले शुद्ध वायु सेवन के लिये बस्ती से बाहर जावे। आध घंटे में बाहर से लौट कर पुरुष १५ मिनिट से आध घंटे तक विशेष व्यायाम कर तथा स्त्रियां स्नान-संध्या से निवृत्त हो कर छोटे बच्चों को जगावें और उन्हें शौच क्रिया कराके स्नान करावें। पुरुष भी विशेष व्यायाम के पश्चात् १५ मिनट आराम करके स्नान कर और फिर प्रेम-पूर्वक सन्ध्योपासना में आसन जमा लें। इस के पश्चात् सारा परिवार मिल कर (५॥ बजे गर्मियों में और ६॥ बजे जाड़ों में) अग्निहोत्र करें। इस प्रकार गर्मियों में ६ बजे तथा जाड़े में ७ बजे घर के सर्व सभासद् विशेष कामों में प्रवृत्त होने के योग्य हो जायँगे। अर्थात् परमात्मा की उपासना

के लिये, धर्मार्थ पर विचार, शारीरिक रोग का निदान तथा व्यायाम यह सर्व साधनमात्र हैं। और जब तक प्रातः मनुष्य परमात्मा का सत्सङ्ग न करले तब तक उसे और किसी काम का आरम्भ नहीं करना चाहिए। अग्निहोत्र इकट्ठे करने के पश्चात् सर्व गृही जुदे जुदे बैठ कर—

स्वाध्याय

में लग जावें। इस में वृद्ध, बाल, नर, नारी का कोई भेद नहीं। बूढ़े, जवान, बाल, स्त्री, पुरुष सब को ही स्वाध्याय नित्यप्रति करना चाहिए। प्रायः देखा गया है कि पौराणिक कुसंस्कारों के कारण बहुधा मनुष्य वृद्धावस्था को ही धर्म ग्रन्थों के पढ़ने का समय समझते हैं। यह बड़ी भारी भूल है। जब सर्व इन्द्रियां शिथिल हो जावेंगी और जब शरीर भी अपने

सँभाले न सँभलेगा उस समय धर्म धन का सञ्चय भला क्या हो सकेगा। इसीलिये आप्त पुरुषों ने कहा है कि (युवैव धर्मशीलस्यात्) वृद्धावस्था से प्रथम हो मनुष्य को धर्म का अभ्यास करना चाहिए। और धर्म के मर्म को जानने के लिए स्वाध्याय से बढ़ कर अन्य कोई साधन नहीं, इतर पुरुषों की तो गणना ही क्या है, ऐसे शास्त्रवित् आर्य समाजी भी देखे हैं जिन को एक सप्ताह में एक बार भी स्वाध्याय करने का अभ्यास नहीं है। कुछ संस्कृतज्ञ पण्डित समझते हैं कि स्वाध्याय का उपदेश उन के लिये नहीं क्योंकि वह धर्मो-पदेश तथा अध्यापन के काम में लगे हुए हैं। यह उन की बड़ी भारी भूल है। प्रातःकाल का स्वाध्याय क्रियायोग का एक अङ्ग महा-मुनि पतञ्जलि ने बतलाया है, और समाधि

की सिद्धि के लिये उस की अत्यन्तावश्यकता है। यदि कोई आर्य पुरुष अपने आपको पण्डित समझते हैं तो उस पण्डिताई को स्थिर रखने के लिये भी उन्हें स्वाध्याय की आवश्यकता है। जो लोग संस्कृत नहीं जानते उन को ऋषि दयानन्द का वेद भाष्य मंगा कर रखना चाहिये। जो वेद भाष्य को न समझ सकें उन के लिये सत्यार्थ प्रकाश तथा ऋग्वेदादि भाष्य भूमिकादि ग्रन्थ उपयोगी हो सकते हैं। हां बहुत से ऐसे सज्जन भी हैं जो कहलाते तो दृढ़ आर्य्य हैं किन्तु जिन्हों ने अब तक आर्य्य भाषा के अक्षर तक नहीं सीखे उन को चाहिये कि जिस भाषा (उर्दू आदि) को वह जानते हों उसी भाषा की धर्म संबंधी किसी पुस्तक का पाठ कर लिया करें। गृह में जिस स्त्री पुरुष को किसी भाषा का भी

ज्ञान न हो वह दूसरे के पास बैठ कर सुनता जाय। तात्पर्य्य यह कि आर्य गृह में कोई भी स्त्री पुरुष ऐसा न होना चाहिए जो नित्य स्वाध्याय न कर लें। इस से धर्म में तुम्हारी श्रद्धा बढ़ेगी आपत्काल में भी धैर्य्य स्थिर रखने का अभ्यास पड़ेगा।

यदि आलस्य को त्याग कर ठीक प्रकार दिनचर्य्या करने की आदत हो तो ऊपर लिखे सारे काम ७ बजे तक समाप्त हो सकते हैं। इस प्रकार तैयारी करने के पश्चात् गृहस्थ को

अर्थ प्राप्ति के साधनों में लगना

चाहिए। रोज़गार किसी तरह का हो सभी अच्छा है। चोरी, झूठ और दग़ाबाज़ी जिस काम में न करनी पड़े वह काम, चाहे संसार की दृष्टि में कैसा ही अधम क्यों

न समझा जावे आर्य्य ऋषियों ने श्रेष्ठ माना है। मनु भगवान ने लिखा है—

न लोक वृत्तं वर्तेत वृत्ति हेतोः कथंचन।
अजिह्मामशठां शुद्धां जीवेद्ब्राह्मणजीविकाम्॥

"गृहस्थ जीविका (रोज़ी) के लिये भी कभी शास्त्र विरुद्ध लोकाचार का बर्ताव न करे किन्तु जिस में किसी प्रकार की कुटिलता, मूर्खता, मिथ्यापन वा अधर्म न हो उस वेदोक्त कर्म सम्बन्धी जीविका को करे।" फिर लिखा है—

परित्यजेदर्थकामौ यौ स्यातां धर्मवर्जितौ।
धर्मं चाप्यसुखोदर्कं लोकाविक्रुष्टमेवच॥

"दौलत और कामनाएँ अधर्म से सिद्ध होती हों तो भी अधर्म सर्वथा छोड़ देवे और वेदविरुद्ध धर्म्माभास जिस के करने से उत्तर काल में दुःख और संसार की उन्नति का

नाश हो वैसा नाममात्र धर्म और कर्म कभी न किया करे।"

संस्कृत विद्या के लोप हो जाने पर भी धर्म से रोज़ी कमाने के नियम को इस देश में प्रचलित रहना सिद्ध करता है कि मनु महाराज का उपरोक्त उपदेश, किसी समय, सारे भारतवर्ष में माननीय समझा जाता था। एक लोकोक्ति में खेती को सब से उत्तम रोज़गार बतला कर, व्यापार को मध्यम पद देते हुए, चाकरी (नौकरी) को निकृष्ट बतलाया है और वास्तव में खेती का काम है भी सब से उत्तम। सब से पहिले तो इस के अतिरिक्त पूरा उपजाऊ और कोई काम नहीं। नौकर आदमी तो वास्तव में कमाता ही कुछ नहीं। उस का तो कथन ही निरर्थक है किन्तु व्यापार में भी केवल धन का हेर-फेर ही होता है।

इस युक्ति को भी छोड़ कर सर्व कामों में से एक खेती और दूसरी शिल्पाक्रिया (कारीगरी) ही ऐसे काम हैं जिन में झूठ बोलने वा धोखा देने की कम बहकावट होती है। व्यापार में भी यदि मनुष्य का हृदय शुद्ध हो तो सचाई से काम चल सकता है किन्तु नौकरी में तो मनुष्य को नर्क ही भोगना पड़ता है। हां यदि मालिक धर्मात्मा हो तो और बात है। फिर भी नौकरी में दुःख ही दुःख है।

पराधीन सपनेहु सुख नाहीं।

यह सब सच है किन्तु धर्मात्मा पुरुष प्रत्येक (हर एक) काम में अर्थात् नौकरी तक में झूठ छल, कपटादि से बच सकता है और अधर्मी पुरुष खेती से उत्तम काम में भी पाप का भागी बन सकता है। इसलिए आर्य्य पुरुषों को सदैव यह विचार रखना चाहिये कि

अधर्म से कमाया हुआ धन उन के घर में कदापि न घुसने पावे।

सन्तोष दूसरा नियम है, जिसका पालन प्रत्येक आर्य्य का कर्तव्य बतलाया गया है। सन्तोष के अर्थ पुरुषार्थहीन होने के नहीं हैं, प्रत्युत् इस का अर्थ यह है कि यदि धर्म से लाखों की जायदाद आ जावे तो आने दो और अधर्म से कमाये हुए एक पैसे के पास भी मत खड़े हो। आर्य्यों को प्रथम रोज़गार बड़े सोच विचार के पश्चात् ग्रहण करना चाहिये, किन्तु जब एक बार किसी रोज़गार में लग-गये तो उसे धर्म और न्याय के नियमों पर निभाना चाहिये।

आर्य्यों के भोजन का समय तथा सामग्री

नियत होने चाहिये। प्रातः स्वाध्याय से

निवृत्त हो कर सारे परिवार को दुग्ध पान करना चाहिये। सात्विक भोजन का जहाँ तक प्रचार रहेगा वहाँ तक ही आर्य्यों की सन्तानों पर ठीक धार्मिक संस्कार पड़ सकेंगे। जिस को सामर्थ हो गाय अवश्य अपने यहां बाँधे। यदि उस की सेवा के लिये नौकर नहीं रख सकता तो सानी (पंजाबी गुतावा) आदि का काम आप सीखे और उस की सेवा से न केवल गोरक्षा का वास्तविक परोपकार करें प्रत्युत अपने परिवार के लिये शुद्ध, उत्तम दुग्ध भी प्राप्त करें। जो लोग इस विषय में समय के प्रभाव की शिकायत करते हैं उन्हें याद रखना चाहिये कि अपनी गप्प-ु प्प के समय में से यदि आधा भी बचा ले तो यह काम बड़ी सावधानी से हो सकता है। तम्बाकू पीना छोड़ दे तो न केवल समय ही बहुत बच

सकता है बल्कि उनको स्वयम् जो आंखों और कानों के रोग हो रहे हैं उन से भी निवृत्ति होगी और उन की सन्तानें भी कुसंस्कार से मुक्त हो जावेंगी। योरुप तथा अमेरिका के देशों में तो आज कल के विद्वान् डाक्टर मुक्तकण्ठ से कह रहे हैं कि हुक्का पीने वाले पुरुषों को सन्तान उत्पन्न करने का ही अधिकार नहीं है। और यह है भी सच्च। तम्बाकू में ऐसा विष है जिस से बढ़ कर हानिकारक दूसरा विष नहीं है। आर्य्यों के घर में हुक्के की गुड़-गुड़ वैसी ही घृणित प्रतीत होनी चाहिये जैसा कि एक धर्मात्मा पुरुष के स्थान पर वेश्या का नाच। सारांश यह कि यदि गप्पशप्प और हुक्के बाज़ी तथा अन्यान्य छोटे बड़े व्यसनों से समय बचाया जावे तो एक निर्धन गृहस्थ भी अपने सारे परिवार को ताज़ा दूध

पिलाकर उन्हें धर्ममार्ग में चलने की सहायता दे सकता है यदि दूध न मिल सके तो फल वा अन्य कुछ भोजन करके सब अपने अपने कामों में लगजावें।

दूसरा समय भोजन का दश तथा ग्यारह बज़े के बीच में होना चाहिये। जिन्हें आगे पीछे काम हो उनके लिये भोजन जुदा रक्खा जा सकता है किन्तु सर्व आर्य्यगण के लिये यदि एक समय भोजन का हो तो अतिथि सत्कार में भी बाधा नहीं पड़ती। इसका वर्णन आगे प्रकरणानुकूल आवेगा। भोजन तैयार होने पर सब से पहिले गृहपति को चाहिये कि बलिवैश्वदेवविधि करें। प्रत्येक आर्य्यगृह में संस्कार विधि तथा पञ्चमहायज्ञविधि आदि ऋषि दयानन्दकृत ग्रन्थ मौजूद होने चाहिएँ। उन के अनुसार चूल्हे में आहु-

तियां डालने के पश्चात् कुत्ता, कौवा, पतितादि के लिये जुदे-जुदे भाग रक्खे ।

अतिथि यज्ञ ।

तब भोजन वर्त्तने की तय्यारी हो । यदि कोई अतिथि आया हो तो सब से पहिले उस को भोजन करावे । प्रायः देखा गया है कि आर्य्य मन्दिरों में आर्य्योपदेशक ठहरते हैं तो चपरासी आर्य सभासदों के घरों से उन के लिये भोजन ले आता है। किसी के यहां भोजन समय ६ बजे और किसी के बारह बजे, उपदेशक बेचारे का भोजन-समय का कोई नियम ही नहीं रह सकता, इस लिये स्वास्थ्य बिगड़ जाता है । यह नियम है कि नियत समय पर साधारण भोजन भी गुणकारी सिद्ध होता है । समय का अनियम होने से पुष्टिकारक भोजन भी दुखदाई सिद्ध होता है । श्रद्धा-

पूर्वक घर में लेजाकर अतिथि को भोजन करा ने से गृहस्थ तथा अतिथि दोनों में धर्मभाव की वृद्धि होती है। आर्य्यों के लिये केवल समाज के उपदेशक ही अतिथि नहीं हैं प्रत्युत जितने भद्रपुरुष अनियत समय में आ निकलें वह सभी अतिथि हैं और उनका सत्कार करना आतिथ्य समझा जाना चाहिये। कुछ स्वतन्त्र संन्यासी ऐसे विचरते हैं जिन को धर्म मूर्त्ति कहा जावे तो अत्युक्ति न होगी। उनके आसन पर ही प्रेम पूर्वक भोजन लेजाइये वा भिजवा-इये। किसी धर्म्म को मानने वाला भी सदा-चारी पुरुष किसी कारण अकस्मात आया हुआ हो तो उसको भोजन कराना आर्य्य पुरुषों का कर्तव्य ठहराया गया है। इस विषय में पक्ष-पात को समीप नहीं आने देना चाहिये।

इसाई, मुसलमान, जैनी, बौद्ध किसी मत

का अनुयायी क्यों न हो, सर्व सदाचारी अतिथियों को सत्कारपूर्वक भोजन कराना चाहिये। शतपथ ब्राह्मण में उस यज्ञ का सिर कटा हुआ बतलाया गया है जिस में आतिथ्य न हुआ हो। इस विषय पर कुछ अधिक इस लिये लिखा है कि आतिथ्य धर्म का पालन छोड़ने से ही आर्य्यों को अधिक हानि पहुँची है, प्राचीन काल में यहां के आतिथ्य ने ही इस देश का यश सारे भूमण्डल में फैलाकर इसे आर्य्यावर्त्त नाम का अधिकारी बनाया था। आतिथ्य के पश्चात् अपने पितरों अर्थात् बड़े बूढ़ों वा मान्यस्थानी पुरुष स्त्रियों को भोजन करावे तत्पश्चात् गृहपति तथा पत्नि कुटुम्ब सहित मिलकर भोजन करें। जिस गृह में भृत्य (नौकर) न हो वहां बारी-बारी भोजन परोसने का काम छोटे लिया करें और शेष सब मिलकर भोजन करें।

भोजन विधि

भोजन खूब चबाकर करना चाहिये। एक ग्रास को कम से कम २५ बार और अधिक से अधिक ४० बार चबाकर अन्दर निगलना चाहिये। ऐसा किये बिना भोजन पचता नहीं और नाना प्रकार के रोग उत्पन्न होते हैं। इकट्ठे बैठ कर भोजन करने में एक यह भी लाभ है कि गृहपति बच्चों को ठीक प्रकार भोजन सिखा सकता है। स्त्रियों को पाक विधि भले प्रकार सीखना चाहिये। दाल, रोटी, चावलादि के साथ हर समय शाक भाजी भी अवश्य होनी चाहिये। प्रत्येक ऋतु के लिये जो जो भाजी उपयोगी है वह गृह-पति को मँगानी चाहिये। इसी लिये ऋषि दयानन्द ने स्त्रीशिक्षा में वैद्यक की विषेश आवश्यकता बतलाई है। मर्द वही वैद्यक पढ़े

जिसे विशेषतः चिकित्सा निदान का ही काम करना हो किन्तु स्त्रियों में प्रत्येक को वैद्यक जानने की आवश्यकता है। कारण यह है कि औषध सेवन से स्वास्थ्य बिगड़ता है, और औषध सेवन की आवश्यकता तब होती है जब कि भोजन ठीक न मिले, इसलिये सारे परिवार के स्वास्थ का बिगड़ जाना वा सुध-रना गृहपत्नि की अयोग्यता वा योग्यता पर निर्भर है। प्रातःकाल के भोजन के साथ कुछ ऋतु अनुकूल फल भी अवश्य होने चाहिएँ। भोजन सामग्री के विषय में आर्य्य वैश्यों से सम्मति लेनी चाहिये।

प्रातःकाल के भोजन का नाम दुग्धपान समय रख कर मैं १० वा ११ बजे के भोजन का नाम भोजन समय रखता हूं क्योंकि पुष्ट से पुष्ट पदार्थ इसी समय खाये जा कर पच

सकते हैं। तीसरा भोजन २ बजे होना चाहिये क्योंकि ३ घंटे एक समय का किया हुआ भोजन पचाने के लिये काफ़ी हैं। इस का नाम जलपाम कहा जा सकता है। कुछ हल्की पकी हुई वस्तु तथा फल वा दुग्ध इस समय की क्षुधा बुझाने के लिये काफ़ी हो सकते हैं। चौथा समय भोजन का अत्यन्त शीतकाल में ६ से ६॥ तक तथा ग्रीष्म ऋतु में ७ से ७॥ तक होना चाहिये। इस का नाम ब्यालू वा ब्यारी पहिले से ही प्रसिद्ध है। रात्रि को इन्द्रियां आराम चाहती हैं। पेट भरा हुआ हो तो गाढ़ निद्रा नहीं आती, इस लिये सायं-काल को खीरादि हल्का भोजन थोड़ा करना चाहिये। आहार शुद्धि के बिना शरीर शुद्धि कठिन और उन के बिना मन तथा आत्म शुद्धि असम्भव, अतएव गृहपालियों को इस योग्य

बनाना कि वह सारे परिवार की आहार शुद्धि का साधन बन सकें, आर्य्यों का पहिला धर्म्म है।

भोजन के सम्बन्ध में ही एक आवश्यक विषय पर लिख देना उचित समझता हूं। जहां खाने की सर्व वस्तुएँ सात्विक चाहिएँ वहां पीने के लिए भी तामस वस्तुओं का प्रयोग कदापि नहीं करना चाहिये। सब से उत्तम

अमृत पान स्वच्छ जल

है। परमात्मा ने अपनी अपार दया से प्यास बुझाने के लिये जल के प्रवाह चला रक्खे हैं इसलिये बहती हुई नदी का जल यदि मिले तो उसे छान कर पीना चाहिये। यदि ऐसे उत्तम भाग्य न हों और निवास के लिये नदी का किनारा न मिल सके, तो अच्छे मीठे कूप का जल वर्तना चाहिये। देखा गया है

कि सर्व कूपों का जल विकार रहित नहीं होता, इसलिए कूपों के जल को उबालने के पश्चात् पीने के कामों में लाना चाहिये। गङ्गा-तट पर तो मैं आनन्द से गङ्गा जल का ही सेवन करता रहा हूं, किन्तु जालन्धर नगर में जब से निवास किया तब भी उबला हुआ जल पीता रहा हूँ। उबले हुए जल का नाम सुनते ही कुछ पुरुष घबरा उठेंगे और पूछेंगे कि बर्सात तथा गर्मियों में गरम जल से कैसे तृप्ति हो सकेगी। प्रथम तो अभ्यास बिगड़ जाने से लोग गरम जल का नाम सुन कर कांप उठते हैं, नहीं तो गरम जल के प्रयोग से प्यास ही कम लगती है। किन्तु यदि ठण्डा जल ही प्रिय हो तो मेरे अमल की पैरवी कीजिए, आपको कष्ट न होगा। सायंकाल ५ बजे उतना जल उबलने को चूल्हे पर रख दिया जाता है जितना दूसरे

दिन तथा रात्रि में पीने के लिए आवश्यक हो। ठीक उबल जाने पर जब जल अच्छी तरह खौलने लगता है तो उसे पीतल के उसी पात्र में ठण्डा होने के लिए रख देते हैं। रात को आठ बजे छान कर वह जल झज्झरों में डाल गीला उपरना ऊपर लपेट मैदान में रख दिया जाता है। प्रातः जल अतीव स्वादिष्ट तथा ठण्डा हो जावेगा। उसे दिन भर आनन्द से भोगिये।

सब से उत्तम वर्षा का जल है। अपने आंगन (सहन) में चादर तान दो, और नीचे जल पात्र रख दो। जल बीच के कूड़े करकट से साफ होकर जलपात्र में आ गिरेगा यह जल बड़ा ही शुद्ध होता है। जहां जलाभाव के कारण वर्षा का जल सुरक्षित करके बर्ता जाता है वहां मनुष्यों के स्वास्थ अच्छे

रहते हैं। किन्तु इस में परिश्रम का व्यय अधिक समझा जाता है। यद्यपि जितना समय वर्षा के जल एकत्र करने में व्यय किया जाता है वह शारीरिक स्वास्थ्य तथा मन की प्रसन्नता का वर्धक ही होता है, तथापि जो लोग कोमल तन्तु (नाजुक मिज़ाज) हैं उनके लिए पानी उबाल कर पीना ही ठीक है।

पानी को अमृत बतलाने का कारण यही है कि जितनी अन्य वस्तुएँ पीने के लिये सर्व साधारण वर्तते हैं यह सब निन्दित हैं। मद्य (शराब) के विषय में तो कुछ लिखने की आवश्यकता ही नहीं क्योंकि मोटी बुद्धि का आदमी भी समझ सकता है कि शराब, चरस गांजादि मादक द्रव्यों का तो आर्य्य समाज के साथ कुछ मेल ही नहीं हो सकता, हाँ कुछ आर्य्य पुरुष पुराने हिन्दु कुसंस्कारों में फंस

कर भङ्ग पीने को पाप नहीं समझते, शायद इसलिये कि भङ्ग में मद्यादि की तरह दुर्गन्धि उत्पन्न नहीं होती । किन्तु यह उनकी भूल है । ऋषि दयानन्द शार्ङ्गधर के निम्नलिखित श्लोकार्द्ध का—

"बुद्धिं लुम्पति यद्द्रव्यं मदकारितदुच्यते"

प्रमाण देकर लिखते हैं—"जो जो बुद्धि का नाश करने वाले पदार्थ हैं । उनका सेवन कभी न करे" इस में क्या सन्देह है कि भङ्ग किसी अंश में मद्य से भी बढ़ कर बुद्धि नाशक द्रव्य है यह सब नशे तो इसलिये भी छूट जाते हैं कि लोक में सभ्य पुरुष इस समय इन सबको घृणित दृष्टि से देखने लग गये हैं ।

तम्बाकू की हानियां

किन्तु एक नशा ऐसा है जिसने इस समय पंजाब देश का अधिकतर नाश कर दिया है । वह नशा

तम्बाकू है। डाक्टर बतलाते हैं कि तम्बाकू पीने वाले की आँखें ख़राब हो जाती हैं, कभी कभी ऐसे पुरुष अन्धे भी हो जाते हैं, अधिकतर इस व्यसन में फँसे हुए बहिरे हो जाते हैं। दिल की बीमारी से कोई ही हुक्कई बचता होगा। इससे भी बढ़कर हुक्कई मलिन तथा गन्दा रहता है हाथों और मुखसे कैसा दुर्गन्ध आता है। मनुजी कहते हैं कि प्रातः उठकर धर्म और अर्थ का चिन्तन करे, किन्तु मुझे कैसा शोक होता है जब आर्यसमाजों के वार्षिकोत्सवों में भी प्रातः उठते ही आर्यसमाजस्थ यात्रियों को धर्मार्थ के स्थान में आग तथा तमाखू की सूझती है। जो समय स्नान करके परमात्मा के ध्यान में लगने का है उसको आग की तलाश में चिलम पकड़े हुवे, बिताना क्या आर्यों को शोभा देता है। बड़ा कष्ट होता है

जब आर्य मन्दिरों में ठीक अन्तरङ्ग सभाओं के अधिवेशनों में हुक्का की गुड़-गुड़ सुनाई देती तथा हवन की सुगन्ध के स्थान में दुर्गन्ध फैलती दीखती है। जब आपकी दृष्टि में अपने उपासनालय की इतनी भी प्रतिष्ठा नहीं तो फिर आप के समाज मन्दिर को धर्म मन्दिर समझने में राजपुरुषों को सन्देह हो तो आश्चर्य क्या है? बच्चे अपने बड़ों का ही अनुकरण करते हैं क्या आर्य्य सभ्यों को यह नहीं सूझती कि अपनी हुक्केबाज़ी से वे अपनी सन्तानों के रास्ते में कांटे बखेर रहे हैं। मैंने अपने लड़कपन में बूढ़ों से सुना था, कि जब किसी गृहस्थ के घर लड़की उत्पन्न हो तो उसे अपनी बांकी पगड़ी सीधी कर लेनी चाहिये। इस लोकोक्ति के कर्त्ता पैत्रिक संस्कारों के प्रभाव से अनभिज्ञ थे नहीं तो कहते कि सन्तानोत्पत्ति का

विचार करते ही सर्व व्यसनों को छोड़ देना चाहिये। मैं अपने आर्य्य भाइयों से विनय पूर्वक प्रार्थना करता हूं कि हुक्के के राजरोग से शीघ्र मुक्ति उपलब्ध करने का प्रबन्ध करें, यदि वह अपनी सन्तानों को बुराइयों से बचाना तथा अपने वैदिक समाज का गौरव बढ़ाना चाहते हैं।

आर्य्य भाई शायद डरेंगे कि हुक्का छोड़ने से उनका मेदा कमज़ोर हो जायगा। डाक्टरों से पूछेंगे तो मालूम होगा कि मेदा हुक्का पीने से भाड़े का टट्टू बन जाता है। हुक्का छोड़ना कुछ बहुत कठिन नहीं है। जो भोजनादि के पश्चात् कुछ आवश्यकता-सी प्रतीत होती रहती थी। इसकी चिकित्सा यह है कि भोजन के पश्चात् तो पान खाना आरम्भ कर दिया और जिन अन्य समयों में हुक्के

का व्यसन हो उन समयों में फल खाना शुरू करें। भूख भी तेज़ हो जाएगी और व्यसन भी छूट जाएगा।

देवियों का कर्तव्य

यहां आर्य्या भगनियों से एक प्रार्थना करनी है। उन्हों ने यदि कुछ शिक्षा ग्रहण की है तो उन का कर्तव्य है कि अपने गृह को पवित्र रखने के कर्तव्य का पालन करें। जिस गृह में प्रातः सायं हवन से वायु की शुद्धि का उपदेश परमात्मा की ओर से है उस गृह में हुक्के की बदबू फैलाने की आज्ञा न दें। अभी अधिक समय व्यतीत नहीं हुआ कि हिन्दू औरतें अपने मांसाहारी पतियों को घर में मांस खाने की आज्ञा नहीं देती थीं, तब वे अपने तबेलों में मांस की हाड्डियां चढ़वाया करते थे। क्या आर्य्य देवियों का

कर्तव्य नहीं कि अपने आदमियों से स्पष्ट कह दें कि यदि हुक्के की दुर्गन्ध फैलानी ही है तो घोड़ों के अस्तबल में उसे लीद के साथ मिलादें। किन्तु इससे भी पूरा सुधार नहीं हो सकता है। हुकई की सन्तान कानों, आंखों और दिल को गँवा कर उत्पन्न होती हैं क्या ऐसी सन्तान को उत्पन्न करने का किसी को अधिकार है ?

तम्बाकू पर अधिक इस लिये लिखा गया है कि इस का विष चुपचाप असर कर रहा है।

खान पान के साथ ही स्नान के विषय पर भी एक ही बार लिख देना उचित है। शरद् ऋतु में एक बार ही स्नान करना पड़ता है। यदि किसी को उस ऋतु में भी दो बार स्नान का अभ्यास हो तो बुरा नहीं। किन्तु ग्रीष्म में दो बार तथा वर्षाऋतु में तीन बार

स्नान करना भी ठीक है। चाहे कितनी बार स्नान करना पड़े।

स्नान ठण्डे पानी से ही करना चाहिये। शरीर को पुष्ट बनाने का इससे बढ़ कर कोई उपाय नहीं। जो लोग बच्चों को गरम पानी से स्नान कराते हैं वे उन बच्चों के लिये सहस्रों रोगों के बीज बोते हैं। ठण्डे पानी से नहलाने पर बच्चों को शिर पीड़ा जुकाम तथा खांसी आदि रोग कुछ नहीं होते। सबसे उत्तम स्नान खुले मैदान हवा में होता है।

ठण्डे पानी में स्नान कराने से जो कभी कभी बच्चों को हानि पहुंचती दीखती है उस का कारण यह है कि माताए नहलाना नहीं जानतीं। नहाने के समय बदन को खूब मलना चाहिए। और बदन अंगोछने के पश्चात्

बच्चों के हाथों और पैरों को नारियल के तेल से रगड़ कर नहला देना चाहिए। अभी दश वर्ष नहीं व्यतीत हुए कि हिन्दुओं की निर्बलता का कारण उनका अधिक स्नान का अभ्यास बतलाया जाता था, किन्तु जापान ने सिद्ध कर दिया कि स्नान शरीर को शुद्ध रखने के कारण उसको अधिक पुष्ट कर सकता है। जापानी को जब अधिक पसीना आकर शरीर दुर्गन्ध युक्त प्रतीत होने लगता है तो वह उसी समय गोता लगा लेता है। जब जल शरीर शुद्धि का साधन है तो उससे वही काम लेना चाहिए। वर्षा ऋतु में पसीना अधिक आता है इस लिए प्रातः सायं स्नान के अतिरिक्त दो पहर के भोजन से पूर्व स्नान करना बड़ा लाभकारी तथा मन की प्रसन्नता का हेतु होता है। शरीर शुद्धि से ही अन्य

सब शुद्धियां सिद्ध होती हैं अतएव हाथ, पांव आदि जो अङ्ग जिस समय अशुद्ध हो उसे उसी समय शुद्ध कर लेना धर्म है। और इस के साथ ही इतना लिख देना भी आवश्यक है कि—

वस्त्र शुद्धि

में आर्यों को अन्य मतावलम्बियों के लिए आदर्श बनना चाहिए। कपड़े रेशमी आदि तो बच्चों को भी नहीं पहनाने चाहिये क्योंकि वह प्रायः शुद्ध नहीं रह सकते। किन्तु सुन्दर वस्त्रों की भी इतनी आवश्यकता नहीं जितनी शुद्ध वस्त्रों की आवश्यकता है चाहे वह कैसे ही मोटे और सादे हों।

वस्त्र शुद्धि पर केवल इतना ही और लिखना है कि यदि अन्य वस्त्र नित्य बदलने की शक्ति न हो तो भी जो उपवस्त्र बदन के साथ सटा

रहता है, उसे अवश्य नित्य बदल लेना चाहिए। यदि इतने वस्त्र न हों कि धोबी के घर अधिक दिनों तक छोड़ सकें तो स्वयम् साबुनादि से धो लेने में भी कुछ गौरव-हानि नहीं समझनी चाहिये। निचले अङ्ग के साथ भी जो वस्त्र सटा रहता है उसे प्रातः सायं दोनों समय धोना चाहिये। पञ्जाब देश के कुछ प्रान्तों में प्रायः देखा गया है कि नहाने के लिये एक लङ्गोटी वा अङ्गौछा रख छोड़ते हैं और एक ही धोती से गुज़ारा करते हैं। यह बड़ा दूषित रिवाज़ है। दोनों काल सन्ध्या के पूर्व धोती, लङ्गोट और उपरना धो लेना चाहिए, चाहे स्नान करना हो वा न। सारांश यह है कि शारीरिक शौच के विषय को तुच्छ नहीं समझना चाहिए, क्योंकि शरीर शुद्धि का अन्य सर्व प्रकार की शुद्धियों के साथ बड़ा गहरा सम्बन्ध है।

वस्त्रों की बनावट

का भी शरीर पर और उसके द्वारा मनादि पर असर पड़ता है। बच्चों को सदैव ऐसे वस्त्र पहिनाने चाहिएँ जिनसे गला, छाती तथा अन्यान्य अङ्ग प्रत्यङ्ग न घुटें और श्वास प्रश्वास के आने जाने में किसी प्रकार की रुकावट न हो। स्त्री पुरुषों को भी वस्त्र ऐसे ही पहिनने चाहिएँ जिन से कोई अङ्ग भी न दबे और न घुटे। तङ्ग पतलून तथा वास्कट पहिनकर अकड़ने से कोई लाभ नहीं, व्यायाम से शरीर ही क्यों न ऐसा कमाया जावे कि ढीले ढाले कपड़ों में भी आप से आप तना रहे। पहिरने के कपड़ों तथा गृह सम्बन्धी सामानों को शुद्ध रखने पर अधिक लिखनेकी आवश्यकता नहीं है, किन्तु इतना और ध्यान दिलाना है कि जिस प्रकार ब्रह्मचारियों के लिए 'समवेष' (पहिरावे में एकता) निश्चित हो चुकी है उसी प्रकार

गृहस्थ स्त्री पुरुषों के लिए भी आर्य्य मात्र 'सम-वेष' निश्चय कर लें तो बड़ा ही उत्तम हो। यह वेष में समता कोई कमेटी काउन्सल कर, वा व्याख्यानादि से उत्तेजित करके नहीं हो सकती। इस संशोधन का ठीक प्रकार यह है कि कुछ परिवार सोच विचार कर एक प्रकार की पोशाक मर्दों, औरतों और बच्चों के लिये नियत करके आचरण में लावें, दश वर्ष पीछे वही आर्य्यों का वेष हो जायगा।

वायु शुद्धि के लिये

जहां नित्य हवन आवश्यक है वहां मकान हवादार होना भी ज़रूरी है। किराये का घर भी लेना हो तो देख लेना चाहिये कि जहां तक हो सके वेद की आज्ञा के अनुकूल ऐसा बना हुआ हो कि उस के प्रत्येक कमरे में वायु खुली तौर पर आ जा सके। जिन को परिवार के

लिये शुद्ध अन्न, जल, वायु प्राप्त कराने की शक्ति नहीं है उन का कोई अधिकार नहीं है कि संसार में जन संख्या को बढ़ावें। इस के लिये मनु-भगवान के उपदेशानुसार गृहस्थ को ऋतुगामी अवश्य होना चाहिये। इस विषय में बुद्धि-मानों के लिये अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है।

सायंकाल की सन्ध्या

का समय ऐसे प्रकार से निश्चित करना चाहिये कि उस के पश्चात् मन विक्षिप्त करने वाले सांसारिक कार्य्य न करने पड़ें। सायंकाल अग्नि-होत्र भी प्रायः परिवार समेत करना ही ठीक है। इस से परिवार में परस्पर प्रेम बढ़ता है, फिर व्यालू भी मिल कर इकट्ठे ही करना चाहिये जिस के पश्चात् दश पन्द्रह मिनट तक आराम कर के सर्व गृह सम्बन्धी स्त्री पुरुष टहलने लगें। यह

समय माता के लिये सन्तानों को उत्तम मानसिक शिक्षा देने का बहुत अच्छा है । जिनके घर की स्त्रियां पढ़ी लिखी नहीं हैं वह इसमें से कुछ समय स्त्रियों को मौखिक योग्य शिक्षा देने में लगावें । इसी समय पर कभी२ उत्तम आर्य्य परिवारों को एक डेढ़ घंटे के लिये निमन्त्रण देकर परस्पर के मेल को बढ़ाना चाहिये । सदाचार का अपनी सन्तानों में संचार करने का इस से बढ़ कर समय नहीं है ।

सोने के समय से पहिले ही गृहपत्नि का धर्म है कि सब बच्चों के हाथ, पैर और मुंह धो कर, उन से ईश्वर प्रार्थना के मन्त्रों का उच्चारण करावे, सन्तानों को पहिले से ही शिक्षा दी जावे कि वह सोने से पहिले सर्व बड़ों को श्रद्धा पूर्वक नमस्ते करें, फिर सब से पीछे माता देवी के पैर छूकर नमस्ते कहें, और माता प्रेम

पूर्वक आशीर्वाद देकर उन को सुला देवें। और यहां मुझे अभिवादन (बड़ों को नमस्ते करना) के विषय में कुछ अधिक लिखने की आवश्यकता है। ऋषि दयानन्द का उपदेश है कि गृहस्थ स्त्री पुरुष जब-जब दिन में मिलें तब तब ही एक दूसरे को नमस्ते पूर्वक अभिवादन करें। इस नियम का पालन आर्यसमाज में बहुत कम किया जाता है। कारण यही प्रतीत होता है कि जिन पुरुषों को बचपन से ही अभिवादन की आदत न हो उन को बड़ी आयु में एक दूसरे के सत्कार के नियम सिखलाना बूढ़े तोते के पढ़ाने से कम कठिन नहीं है। मेरा यह तात्पर्य नहीं कि बड़ी आयु में शिक्षा हो नहीं सकती। मैंने कुछ आर्य ऐसे बूढ़े देखे हैं जिन्हों ने बड़ी उम्र में सत्कार के नियम सीखे हैं, किन्तु जिन बच्चों को छोटी उम्र से ही अभिवादन की शिक्षा दी

जाय, बड़ी आयु होने पर दूसरे का योग्यमान्य तथा सत्कार करना उन का स्वाभाविक गुण हो जाता है। और इस से अनगिनित लाभ होते हैं। मनु भगवान कहते हैं।

अभिवानशीलस्य नित्यंवृद्धोऽपिसेविनः।
चत्वारितस्य वर्द्धन्ते आयुर्विद्यायशोवलम् ॥

अभिवादन जिस के स्वभाव में ही हो, तथा नित्य वृद्धों का जो सेवन करे उसकी उम्र, विद्या, यश और बल नित्य बढ़ते रहते हैं। यहां वृद्ध से मतलब श्वेत (सफ़ेद) केशधारी से नहीं है प्रत्युत वृद्ध से मनु महाराज का मतलब उस पुरुष से है जिसकी बुद्धि बढ़ी हुई हो। मनु के कथनानुसार अभिवादन ही एक मोहिनी मन्त्र है जिस के वश में सर्व उत्तम गुण हो सकते हैं। अभिवादनशील मनुष्य कठोर से कठोर हृदय को भी मोम बना देता है। इस समय नास्तिकपन की जो लहर चल

रही है उसका अधिक कारण हमारी सन्तानों का अभिवादन शील न होना ही है। इस समय के युवकों तथा अधेड़ोंके घमण्ड की बुनियाद बचपन में ही पड़ चुकी थी। जिसको यह लोग स्वात्ममान्यता (Self-respect) समझते हैं वह बुरे प्रकार का स्वाभिमान तथा आत्मश्लाघा ही है। सारांश यह है कि बाल, युवा, नर, नारी सब के लिए अभिवादन शील हो कर नित्य अपने से बड़ों की सेवा करना आवश्यक धर्म है।

पति, पत्नि भी प्रेम पूर्वक एक दूसरे को नमस्ते करके ही शयन करें। सोने के लिये

खटिया यथायोग्य होनी चाहिये

गृहस्थ स्त्री पुरुष तो भले ही निवार के पलङ्ग तथा अन्य खटिया, बान वा सूतली से बुनी हुई, प्रयोग में लावें, यद्यपि उन के लिये भी कठोर खाट लाभदायक ही हो सकती है। किन्तु अवि-

वाहित लड़कों को कभी भी लचकदार पलङ्ग तथा नरम गदेलों पर न सुलावें। दश वर्ष की आयु के पश्चात् तो बराबर सख्त तख्त के ऊपर ही सुलाना चाहिये। इस से वीर्यरक्षा में बड़ी सहायता मिलती है। मैं जानता हूँ कि इस समय आर्य्यों के सौ पढ़ने के योग्य लड़कों में मुश्किल से दो ऐसे होंगे जिन्हें गुरुकुल में नियम पूर्वक प्रविष्ट होना मिला है, अतएव आर्य्य गृहस्थों की सन्तान घर पर रह कर ही स्कूलों तथा कालिजों में शिक्षा ग्रहण कर रही है। उन के लिए भी उत्तम नियमों का पालन बहुत लाभदायक हो सकता है।

बिछौना भी सदैव स्वच्छ रहना चाहिये

जिन दिनों (ज्येष्ठ तथा आषाढ़) गर्मी अधिक पड़ती है उन दिनों के अतिरिक्त शेष सर्व ऋतुओं में रात को बिछौना नमदार हो जाता

है इस लिये नित्य घर के बिछौने कुछ काल धूप में रख देने चाहिये। फिर उन्हें झाड़ पोंछ तथा लपेट कर नियम पूर्वक रख देना चाहिये। यदि नौकर रखनेकी शक्ति न हो तो गृहके स्त्री पुरुषों को बारी २ इस काम का भी व्रत धारण करना चाहिये और इस स्थानमें यह नियम नहीं भूलना चाहिये कि हर चौथे दिन न हो सके तो हर सातवें दिन बिछौने की चादरें सिरहानेके गिलाफ़ादि बदल दिये जावें। ठीक तो यही है कि दरी आदि सबसे नीचे का बिछौना भी सातवें दिन ही बदला जावे किन्तु यदि ऐसा करने की शक्ति न हो तो एक मास के पश्चात् दरी भी अवश्य बदलनी चाहिए।

सोने का स्थान सदैव हवादार

होना चाहिए। दिन को तो मनुष्य प्रयत्न पूर्वक भी श्वास ले सकता है किन्तु सोते हुए

श्वासका ठीक चलना अभ्यास तथा खुली जगह पर निर्भर है। जलादिसे भी बढ़कर वायु जीवन का हेतु है। गर्मियों में खुले मैदान, आकाश की छत के नीचे ही, सोना चाहिए। बरसातादि में जब ओस पड़ने लगे तब बराण्डे में वा सहन में बरसाती लगा कर सो जाओ। किन्तु जाड़े में मकान के अन्दर ही सोना चाहिये वैसे तो जाड़े की ऋतु स्वास्थ्यके लिये अत्युत्तम है किन्तु फिर भी उन दिनों बच्चों की बीमारी अधिक सुननेमें आती है। कारण यह कि प्रथम तो माताएँ बच्चों को झूठे प्रेम के शिकञ्जे में ऐसा कसती हैं कि उसका वैसे दम घुंटता है और उस पर अधिक यह कि दर्वाजे खिड़की यहां तक कि रोशनदान भी बन्द करके सोती हैं। आर्य्य पुरुषोंको अपने आचार तथा प्रचार से इस दूषित व्यवहार को दूर करना चाहिए। रज़ाई में मुंह छिपाकर कभी मत

शयन करो। मुँह को बड़ी से बड़ी सर्दी में भी सिंहवत् खुला रहने दो। दर्वाज़ा भले ही बन्द कर लो किन्तु रोशनदान तथा खिड़कियां सब खुली रक्खो वायु को खुले वन्दों आने-जाने दो, फिर देखो प्रातः काल तुम्हारा सारा परिवार कैसा आलस्यहीन उठता है। वायु जितनी मिले उतनी ही थोड़ी। स्वच्छ वायु से बढ़कर आयु-वर्धक और कोई भी अमृत नहीं है।

रात को गृह में शान्ति का राज्य

होना चाहिये। कुछ कोलाहल नहीं होना चाहिये। यह समय मन तथा इन्द्रियों को आराम देकर दूसरे दिन के काम के योग्य बनाने का है।

नित्य कर्म्म के विषय में इस से अधिक लिखने की मुझ में सामर्थ्य नहीं, किन्तु इतना भी क्या कुछ कम है। एक कर्तव्य का पालन मनुष्य को

अन्य तीनों कर्त्तव्यों के पालनके योग्य बनाता है, इस लिये मुझे दृढ़ आशा है कि जो मनुष्य इन वैदिक उपदेशों पर चलने के लिये पहिला पग आगे रक्खेंगे, उनको एक विचित्र आकर्षण शक्ति आप से आप आगे को खींचेगी।

कम समझ आदमियों ने गृहस्थाश्रम को दुख का मूल वर्णन किया है। यदि वास्तव में गृहस्थ दुःख का मूल ही होता तो उस के लिये ऊपर कहे प्रयत्नों की आवश्यकता न थी। किन्तु मनु भगवान का गृहस्थ के विषयमें बहुत ही उत्तम विचार है। वह लिखते हैं:—

यस्मात् त्रयोऽप्याश्रमिणो दानेनान्नेन चान्वहम् ।
गृहस्थे नैवधार्यन्ते तस्माज्ज्येष्ठाश्रमो गृही ॥

जिससे ब्रह्मचारी, वानप्रस्थ और संन्यासी इन तीन आश्रमियों को अन्न वस्त्रादि दान से नित्य प्रति गृहस्थ धारण पोषण करता है इस

लिये व्यवहार में गृहस्थाश्रम सब से बड़ा है। इसी लिये मनु भगवान फिर ज़ोर से लिखते हैं कि—

सर्वेषामपिचैतेषां वेदस्मृति विधानतः।
गृहस्थ उच्यते श्रेष्ठः सत्रीनेतान् बिभर्तिहि॥
नदी नदाः सर्वे सागरे यान्ति संस्थितिम्।
तथैवाश्रमिणाः सर्वे गृहस्थेयान्ति संस्थितिम्॥

'वेद और स्मृति के प्रमाण से सर्व आश्रमों में गृहस्थाश्रम श्रेष्ठ है क्योंकि यही (बाकी) तीन आश्रमों का धारण और पालन करता है। जैसे नदियां तथा बड़े नद सब मिल कर समुद्र में जाकर ठहरते हैं इसी प्रकार सर्व आश्रमी गृहस्थ ही को प्राप्त होकर स्थित होते हैं"। गृहस्थ की इतनी प्रशंसा को केवल अत्युक्ति ही न समझनी चाहिये। मनु महाराज का वास्तविक विश्वास था कि गृहस्थ धर्म से बढ़ कर कोई धर्म नहीं है।

वेद स्पष्ट आज्ञा देते हैं कि गृहस्थ को धारण करते हुए घबराओ नहीं किन्तु साथ साथ उस के धारण करने के लिये बल पहिले से प्राप्त करो। गृहस्थ इस समय क्यों नर्क का मूल दीख रहा है? इस लिये कि जो मनुष्य गृहस्थ को धारण कर रहे हैं वे उस के योग्य नहीं। आज कहने सुनने पर भी बहुत पुरुष अपने आप को ब्रह्मचर्य्य, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रम के अयोग्य बतला कर अपने कर्तव्यों को टालते हुए दिखाई देते हैं किन्तु गृहस्थ में प्रवेश करते समय बालक तथा वृद्ध किसी को भी किञ्चित् मात्र संकोच नहीं होता। जहां दश वर्ष के बालक को उस के माता पिता निःशंक होकर नौ व दश वर्ष की बच्ची के साथ जोड़ देते हैं वहां सत्तर वर्ष का बूढ़ा भी निर्लज्ज होकर दश वर्ष की कन्या को व्याहने के लिये

तय्यार हो जाता है; ऐसी अवस्था में क्या हम सब शुद्ध हृदय से कह सकते हैं कि आज कल एक भी सच्चा गृहस्थ विद्यमान है। इसी लिये तो मनु महाराज कहते हैं:—

स संधार्यः प्रयत्नेन स्वर्गमक्षयमिच्छता।
सुखंचेहेच्छता नित्यं योऽधार्यो दुर्बलेन्द्रियैः॥

"हे स्त्री पुरुषो! यदि तुम अक्षय मुक्ति सुख और इस संसार के सुख की इच्छा रखते हो तो उस गृहस्थाश्रमको नित्य प्रयत्नसे धारण करो, जो दुर्बलेन्द्रिय और निर्बुद्धि पुरुषों के धारण करने के योग्य नहीं है।"

कैसा स्पष्ट वाक्य है? जिसका शरीर और जिसका मन, बुद्धि समेत, बलवान हो, वही गृहस्थ ज्येष्ठ आश्रमके बोझ को उठाने के योग्य हो सकता है। मूर्ख और बलहीन पुरुष में उस बोझ के उठाने की शक्ति ही नहीं है। सम्भव

है कि एक बुद्धि हीन, दुर्बलेन्द्रिय पुरुष ब्रह्मचर्य्याश्रम में प्रवेश करके अपने आचार्य्य की कृपा तथा प्रेम का पात्र बन कर मरण पर्यन्त ब्रह्मचारी रह सके, किन्तु एक मूर्ख कमज़ोर मनुष्य का गृहस्थ धर्म पालन करना सर्वथा असम्भव है।

आर्य्य पुरुषो! यह माना कि सारे संसार में जहां तक वैदिक शिक्षा से लोगों ने मुख मोड़ा वहां तक ही बराबर उनका दुःख बढ़ता गया, किन्तु क्या तुम्हारा अन्य पुरुषोंसे कुछ भेद है! यदि नहीं तो तुममें आर्यपन क्या है? मैंने माना कि तुम्हारे माता पिता ने तुम्हें तुम्हारी सलाह के बिना ही गृहस्थ में जोत दिया, यह भी माना कि तुम में से जिन्होंने स्वयम् गृहस्थ रूपी सम्बन्ध जोड़े उन्होंने अज्ञानवश अपनी शक्तियों को नहीं समझा। फिर क्या करना चाहिये?

गृहस्थ के लिये ब्रह्मचर्य्याश्रम तय्यारी का समय है। तुम बिना तय्यारी गृहस्थ युद्ध में सम्मिलित हो रहे हो। उस समय तुम को अपने कर्त्तव्य का ज्ञान न था, किन्तु इस समय तो तुम्हें यह बहाना भी सहारा नहीं दे सकता। अब तुम्हारी आंखें खुल चुकी हैं। प्रश्न फिर वही है कि अब क्या करना चाहिए। मेरी सम्मति में तुम में से जितने बुद्धि तथा बल हीन हैं उन्हें पर-स्पर (पति, पत्नी) विचार पूर्वक

फिर से ब्रह्मचर्य्य व्रत धारण

करना चाहिए। पति और पत्नि दोनों को अपने विषय में एक दूसरे के लिए आचार्य्य बनना चाहिए। ये शब्द तुम्हें घबराहट में अवश्य डालने वाले होंगे किन्तु चौंको नहीं। तुमने वैदिक धर्म को ग्रहण किया है, इस लिये पौराणिक संस्कारों से मुक्त होना तुम्हारा

कर्त्तव्य है। जब तक दोनों की बुद्धि स्वच्छ न हो जाय, जब तक दोनों के शरीर बलिष्ठ, धार्मिक सन्तान उत्पन्न करने में समर्थ न हो जाएँ, तब तक ब्रह्मचर्य्य पूर्वक एक दूसरे का संशोधन करते चले जाओ। यही सदाचार है, यही तुम्हारा अन्य पुरुषों से भेद कराने वाला कर्म है। मनु जी फिर कहते हैं—

आचाराल्लभते ह्यायुराचारादीप्सिताः प्रजाः।
आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो हन्त्यलक्षणम्॥

"धर्माचरण से ही दीर्घायु (बड़ी उमर) उत्तम प्रजा (सन्तान) और अक्षय धन को मनुष्य प्राप्त होता है और (साथ ही) धर्माचार बुरे अधर्म युक्त लक्षणों का नाश कर देता है।"

आर्य्य पुरुषो! आचार शुद्धि में मन से लग जाओ तब तुम आर्यपद ग्रहण करने की ओर चल सकोगे और न केवल अपना ही यह

लोक तथा परलोक सुधार सकोगे, बल्कि अपने पड़ोसियों को भी बिना अपना मुख खोले वैदिक धर्म्म की शरण में ला सकोगे।

शमित्योम्।

म० नारायण स्वामीजी महाराज

लिखित उपयोगी पुस्तकें

आत्मदर्शन

यह पुस्तक स्वामी जी ने वर्षों के स्वाध्याय के बाद वानप्रस्थ आश्रम में लिखी है। संसार के विभिन्न-विभिन्न मतों, फिलासफी तथा साइंस में आज तक आत्मा के विषय में जितनी भी थियोरिएँ निकली हैं, उन सब का इस पुस्तक में विचार किया गया है। प्रत्येक अध्याय में एक से एक बढ़ कर शिक्षाप्रद और उपयोगी बातें हैं। हिन्दी में इस विषय का यह सर्वोत्तम ग्रन्थ है। देश की किसी भी भाषा में अभी तक इसके जोड़ का ग्रन्थ प्रकाशित नहीं हुआ। इसका चौथा संस्करण अभी छपा है। मूल्य १।) सजिल्द १॥)।

अमृत वर्षा

यों तो स्वामीजी की सभी पुस्तकें एक से एक बढ़कर हैं। किंतु सर्व साधारण, स्त्री पुरुषों

के लिए जितनी यह पुस्तक उपयोगी है दूसरी नहीं। इस में प्रभु का स्मरण, भक्ति का सच्चा उपाय, आत्मबल की आवश्यकता, आगे बढ़ो, दुःखों की औषधि, ईश्वर प्राप्ति के साधन, सच्ची शांति का सच्चा उपाय, अभ्यास का महिमा, वैदिक धर्म की विशेषता आदि ३० विषयों का विस्तार पूर्वक उल्लेख किया गया है। पुस्तक क्या है आत्मशांति का स्रोत है। छपाई बहुत बढ़िया मूल्य ॥।)

मृत्यु और परलोक

मृत्यु का वास्तविक रूप, मृत्यु दुःख प्रद क्यों प्रतीत होती है, मरने के बाद क्या होता है, प्राण छोड़ने के समय प्राणी की क्या हालत होती है, भूत प्रेत क्या हैं, आत्मा को एक योनि से दूसरी योनि तक पहुंचने में कितना समय लगता है, जीव दूसरे शरीर में जाता क्यों है आदि का महत्व पूर्ण प्रश्नों पर इस पुस्तक में विचार किया गया है पुस्तक पढ़ने योग्य है। मू० ॥।=)

प्राणायाम विधि

मन को शुद्ध तथा शरीर को तन्दुरुस्त रखने और नाना प्रकार के रोगों तथा व्याधियों

से छुटकारा पाने का एक मात्र उपाय प्राणायाम है। प्राणायाम क्या है और किस प्रकार करना चाहिए— यही इस पुस्तक में बताया गया है। मूल्य ≈)

आर्यसमाज क्या है

पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है। यह आर्यसमाज से अपरिचित पुरुषों को आर्यसमाज के नियमों और मोटे मोटे सिद्धान्तों से परिचित कराने का अच्छा साधन है। पुस्तक में जिन विषयों का समावेश है उन्हें खोल कर प्रगट करने का प्रयत्न किया गया है। पुस्तक दूसरी बार सुन्दर छपी है। मूल्य प्रचारार्थ।—)